हनुमान राम

बनाम

राजस्थान राज्य एवं अन्य

अक्तूबर 13, 2008

[न्यायमूर्तिगण डॉ0 अरिजीत पसायत एवं जे0 एम 0 पंचाल]

आपराधिक प्रक्रिया संहिता,1973– धारा 311– साक्षी को वापस बुलाने/पुनः परीक्षित करने का दायरा और उद्देश्य– निर्णीत हुआ– एक बार जब गवाह की मुख्य परीक्षा एवं जिरह पूर्ण हो जाती है, तो ऐसे गवाह को उक्त उस साक्ष्य को अस्वीकार करने हेतु वापस नहीं बुलाया जाना चाहिए, जो उसने पहले ही न्यायालय के समक्ष दे दिया था, भले ही उस गवाह ने बाद में किसी अन्य न्यायालय या फोरम के समक्ष असंगत बयान दिया हो– दंड संहिता, 1860– धारा–147,452,364, 302/149 एवं 201/149।

अभियुक्त–प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 आई०पी०सी की धारा 147, 452, 364, 302/149 और 201/149 के अंतर्गत विचारण का सामना कर रहे थे। उक्त वाद में विभिन्न गवाहों, जिसमे पी०डब्ल्यू० 3 और 5 भी सम्लिमित थे, से पूछताछ एवं जिरह की गई। पी०डब्लू० 3 एवं 5 का परिक्षण बतौर अभियोजन गवाह जुवेनाइल कोर्ट के समक्ष भी किया गया, जिसमें एक आरोपी ने खुद को नाबालिग होने के दावा किया था।

प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 ने सी०आर०पी०सी की धारा 311 के अंतर्गत ट्रायल कोर्ट के समक्ष प्रार्थना पत्र प्रस्तुत करते हुए याचना की पी०डब्लू० 5 और पी०डब्लू 3 को किशोर न्यायालय के समक्ष उनके द्वारा दिए गए बयानों के संदर्भ में, नए सिरे से जिरह के लिए बुलाया जाए। उक्त प्रार्थना पत्र निरस्त कर दिया गया।

प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 ने सी०आर०पी०सी की धारा 397 सपठित धारा 401 के अन्तर्गत याचिका दायर की। उच्च न्यायालय ने उक्त याचिका को स्वीकार कर लिया तथा विचारण न्यायालय को पी०डब्ल्यू० 3 और 5 की बुलाय जाने एवं पुनः परीक्षित किए जाने की आदेश दिए। इसलिए वर्तमान अपील है।

कोर्ट ने अपील स्वीकार करते हुए यह निर्णीत किया कि,

1.1 यह धारा स्पष्ट रूप से दो भागों में है। जहाँ तक पहला भाग सम्बंधित है तो उक्त भाग में प्रयुक्त शब्द "सकता है" है, वहीं दूसरे भाग में "करेगा" शब्द का प्रयोग किया गया है। परिणामस्वरुप, पहला भाग फौजदारी न्यायालय को पूरी तरह से विवेकाधीन अधिकार देता है और उसे संहिता के तहत किसी भी जांच, परीक्षण या कार्यवाही के किसी भी चरण में (ए) किसी को गवाह के रूप में बुलाने के लिए, या (बी) उपस्थित किसी भी व्यक्ति को परीक्षित करने का, या (सी) किसी ऐसे व्यक्ति, जिसका साक्ष्य पहले ही दर्ज किया जा चुका है,को पुनः तलब करते हुए पुनः परीक्षित कराये जाने का अधिकार देता है। दूसरी ओर दूसरा भाग अनिवार्य है और यदि नए साक्ष्य मामले के उचित निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होते हैं तो न्यायालय को उपरोक्त कोई भी कदम उठाने के लिए बाध्य करता है। यह एक पूरक प्रावधान है, और कुछ परिस्थितियों में न्यायालय पर यह कर्तव्य अधिरोपित करता है ऐसे महत्वपूर्ण गवाह की परिक्षा करायी जाए जिसे उसके समक्ष नहीं लाया गया है। यह प्रावधान यथासंभव व्यापक रूप में अंकित किये गए है, तथा इसमें किसी सीमा न तो स्तर के संबंध में, न ही उस तरीके के संबंध में जिसमें इसका न्यायालय द्वारा प्रयोग किया जाना चाहिए। यह न केवल विशेषाधिकार है, बल्कि न्यायालय का स्पष्ट कर्तव्य भी है कि वह उन गवाहों को परीक्षित कराये, जिन्हें वह राज्य एवं उसके विषय के बीच न्याय करने के लिए आवश्यक समझता है। सभी विधिक तरीकों से सत्यता तक पहुंचने के लिए न्यायालय का कर्तव्य है और ऐसे तरीकों में से एक है अपनी इच्छा से गवाहों को परीक्षित करना, जब कुछ सुस्पष्ट कारणों से कोई भी पक्षकार उन गवाहों को परिक्षण कराने के लिए तैयार नहीं है तथा जो महत्वपूर्ण प्रासंगिक तथ्य बोलने की स्थिति है।

1.2– संहिता की धारा 311 का अंतर्निहित उद्देश्य यह है कि मूल्यवान साक्ष्य को रिकॉर्ड पर लाने में किसी भी पक्ष की गलती या दोनों ओर से परीक्षित कराये गए गवाहों के बयानों में अस्पष्टता होने के कारण न्याय में विफलता न हो । निर्धारक कारक यह है कि क्या ऐसा साक्ष्य मामले के उचित निर्णय के लिए आवश्यक है। यह धारा केवल अभियुक्तों के लाभ तक ही सीमित नहीं है तथा इस धारा के अंतर्गत किसी गवाह को केवल इसलिए बुलाना क्योंकि उक्त गवाह केवल अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन करता है, न कि अभियुक्त का, न्यायालय की शक्तियों का अनुचित प्रयोग नहीं होगा। यह धारा एक सामान्य धारा है जो संहिता के तहत सभी कार्यवाहियों, पूछताछ और परीक्षणों पर लागू होती है और मजिस्ट्रेट को ऐसी कार्यवाही, परीक्षण या पूछताछ के किसी भी चरण में किसी भी गवाह को समन जारी करने का अधिकार देती है। धारा 311 में महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति है "इस संहिता के तहत जांच या परीक्षण या अन्य कार्यवाही के किसी भी चरण में"। हालाँकि, यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उक्त धारा गवाहों को बुलाने के लिए न्यायालय को बहुत व्यापक शक्ति प्रदान करती है, लेकिन प्रदत्त विवेक का

उपयोग विवेकपूर्ण तरीके से किया जाना चाहिए, क्योंकि शक्ति जितनी व्यापक होगी न्यायिक दिमाग के प्रयोग की आवश्यकता उतनी ही अधिक होगी।

1.3 जैसा कि ऊपर बताया गया है, उक्त धारा पूर्णतः विवेकाधीन है। इसका दूसरा भाग मजिस्ट्रेट पर एक दायित्व डालता है: वह यह है कि न्यायालय उन सभी व्यक्तियों को बुलाएगा और उनकी परिक्षण करेगा जिनके साक्ष्य मामले के उचित निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होते हैं। साक्ष्य विधि में यह एक प्रमुख नियम है कि सर्वोत्तम उपलब्ध साक्ष्य न्यायालय के समक्ष लाया जाना चाहिए। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (संक्षेप में ' साक्ष्य अधिनियम') की धारा 60 , 64 और 91 , इसी नियम पर आधारित हैं। संहिता के प्रावधानों न्यायालय को यह अधिकार नहीं है कि वह अभियोजन या बचाव पक्ष को अपने पक्ष के किसी विशेष गवाह या गवाहों से पूछताछ करने के लिए बाध्य कर सके। इसे पक्षकारों पर छोड़ देना चाहिए। लेकिन साक्ष्यों का मूल्यांकन करते समय, न्यायालय इस तथ्य पर ध्यान दे सकता है कि सर्वोत्तम उपलब्ध साक्ष्य नहीं दिया गया है और प्रतिकूल निष्कर्ष निकाल सकता है। न्यायालय को प्राय: पक्षकारो द्वारा लगाए गए आरोपों या साक्ष्य में प्राप्त तथ्यों से अनिर्णायक निष्कर्ष पर निर्भर रहना होता है। ऐसे मामलों में न्यायालय को धारा के दूसरे भाग के अन्तर्गत कार्यवाही करनी चाहिये। कभी–कभी न्यायालय के निर्देशानुसार गवाहों का परिक्षण "खामियों को भरना" माना जा सकता है। यह पूरी तरह से एक सहायक कारक है और इसे पर ध्यान नहीं देना चाहिए। नया साक्ष्य आवश्यक है या नहीं, यह निश्चित रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर होना चाहिए, और इसका निर्धारण पीठासीन न्यायाधीश द्वारा किया जाना चाहिए।

1.4 धारा 311 का उद्देश्य न केवल अभियुक्त और अभियोजन पक्ष के दृष्टिकोण से बल्कि व्यवस्थित समाज के दृष्टिकोण से भी साक्ष्य को रिकॉर्ड पर लाना है। यदि न्यायालय द्वारा बुलाया गया कोई गवाह शिकायतकर्ता के विरुद्ध साक्ष्य देता है तो उसे जिरह का अवसर दिया जाना चाहिए। अदालत द्वारा बुलाए गए गवाह से जिरह करने का अधिकार धारा 311 के प्रावधान के तहत नहीं , बल्कि साक्ष्य अधिनियम के तहत आता है, जो एक पक्ष को ऐसे गवाह से जिरह करने का अधिकार देता है जो उसका अपना गवाह नहीं है। चूँकि न्यायालय द्वारा बुलाए गए गवाह को किसी विशेष पक्ष का गवाह नहीं कहा जा सकता, इसलिए न्यायालय को शिकायतकर्ता को जिरह का अधिकार देना चाहिए।

1.5 एक बार जब गवाह की मुख्य परीक्षा एवं जिरह पूर्ण हो जाती है, तो ऐसे गवाह को उक्त उस साक्ष्य को अस्वीकार करने हेतु वापस नहीं बुलाया जाना चाहिए, जो उसने पहले ही न्यायालय के समक्ष दे दिया था, भले ही उस गवाह ने बाद में किसी अन्य न्यायालय या फोरम के समक्ष असंगत बयान दिया हो। किसी गवाह का प्रति परीक्षा केवल उसके द्वारा दिए गए पिछले बयनों से ही करायी जा सकती है। उच्च न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 311 के संदर्भ में प्रार्थना स्वीकार करने के कोई विधिक अधिकार नहीं है। मामले के तथ्यों के अनुसार, उच्च न्यायालय को संहिता की धारा 311 के अंतर्गत में आरोपी व्यक्तियों द्वारा की गई प्रार्थना को स्वीकार नहीं करना चाहिए था।

जगत रवि बनाम महाराष्ट्र राज्य **ए०आई०आर (1968) एस०सी 178,** राम पासवान और अन्य बनाम झारखंड राज्य **(2007) 11 एस०सी०सी 191**, इद्दर और अन्य आबिदा और अन्य **(2007) 11 एससीसी 211**, मिश्रलाल एवं अन्य बनाम एमपी राज्य और अन्य **(2005) 10 एससीसी 701**. (निर्णय जिन पर आश्रय किया गया।)

विधि व्यवस्था संकेत

ए०आई०आर (1968) एस०सी 178	**आश्रय किया गया**	**प्रस्तर 9**
(2007) 11 एस०सी०सी 191	**आश्रय किया गया**	**प्रस्तर 9**
(2007) 11 एससीसी 211	**आश्रय किया गया**	**प्रस्तर 9**
(2005) 10 एससीसी 701	**आश्रय किया गया**	**प्रस्तर 10**

फौजदारी अपीलीय क्षेत्राधिकार: फौजदारी अपील संख्या 1597/2008

राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर की एकल पीठ द्वारा फौजदारी पुनरीक्षण याचिका संख्या 912/2007 में पारित अंतिम निर्णय एवं आदेश दिनांकित 25/10/2007 के विरुद्ध ।

अपीलार्थी की तरफ से बृजभूषण ।

प्रत्यर्थीगण की तरफ से जतिंद्र कुमार भाटिया एवं आर०सी० कोहली ।

न्यायालय का यह निर्णय न्यायमूर्ति अरिजीत पसायत के द्वारा घोषित किया गया ।

1. अनुमति प्रदान की जाती है ।

2. इस अपील में राजस्थान उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा प्रत्यर्थी सं 2 और 3 के आवेदन को स्वीकार किये जाने के आदेश को चुनौती दी गयी है। उक्त प्रत्यर्थियों द्वारा ने विद्वान अतिरिक्त

सत्र न्यायाधीश, (फास्ट ट्रैक), पर्बतसार द्वारा पारित आदेश दिनांकित 14.8.2007 की विशुद्धता पर प्रश्न उठाया गया था, जिसके जरिये अभियुक्त द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 311 के अन्तर्गत प्रस्तुत किये गए प्रार्थना पत्र को अस्वीकार किये जाने का आदेश पारित किया गया था।

3. तथ्यात्मक पहलुओं का एक संक्षिप्त संदर्भ पर्याप्त होगाः

प्रत्यर्थी सं० 2 और 3 भारतीय दंड संहिता,1860 (संक्षेप में– भा०द०स०) की धारा 147,452,364,302/149 एवं 201/149 के अंतर्गत का विचारण का सामना कर रहे है । समय–समय पर विभिन्न गवाह परीक्षित हुए जिसमे नंदराम (पी०डब्लू० 5) और भोपालाराम (पी०डब्लू० 3) भी सम्मिलित है। नंदराम की मुख्य परीक्षा एवं प्रतिपरीक्षा 21 नवंबर को एवं भोपालाराम की मुख्य परीक्षा एवं प्रतिपरीक्षा दिनांक 7 जून 2006 को की गई। अभियुक्तों में से एक अभियुक्त "श्रीकांत" के नाबालिग होने का दावा किया अतः उक्त अभियुक्त का विचारण बाल अदालत में चलाया गया था। उक्त मामले में भी भोपालाराम की मुख्य परीक्षा दिंनाक 9 जनवरी, 2007 को की गई थी। अपने साक्ष्य में भोपालाराम ने अभियोजन पक्ष के बयान का समर्थन नहीं किया। इसी तरह, नंदराम की भी मुख्य परीक्षा नवंबर, 2006 में किसी समय बाल न्यायालय के समक्ष की गयी थी। अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष एक प्रार्थना पत्र अंतर्गत धारा 311 द०प्र०सं० दाखिल करते हुए यह प्रार्थना की गयी नंदराम और भोपालाराम द्वारा बाल्य न्यायालय में दिए बयानों के सन्दर्भ में उनकी जिरह हेतु पुनः तलब किया जाये। विचारण न्यायालय द्वारा उक्त प्रार्थना पत्र स्वीकार करने योग्य नहीं मानी गयी तथा उसे निरस्त कर दिया गया। उक्त आदेश दिनांकित 14.8.2007 जिसके माध्यम से उक्त प्रार्थना पत्र निरस्त किया गया था, की परिशुद्धता को उच्च न्यायालय के समक्ष द०प्र०सं० की धारा 397 सपठित धारा 401 के अंतर्गत चुनौती दी गई। उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय द्वारा याचिका को स्वीकार कर लिया और विचरण न्यायालय को भोपालाराम और नंदाराम को पुनः परीक्षित किये जाने के निर्देश दिये। उच्च न्यायालय द्वारा उक्त प्रार्थना पत्र को स्वीकार करने के निम्न कथन किये–

> "वर्तमान मामले में, यह विवादित तथ्य नहीं है कि भोपालाराम और नंदाराम को अभियोजन गवाह के रूप में बाल्य न्यायालय, अजमेर के समक्ष के परीक्षित हुए और उस मामले में उनकी गवाही निश्चित रूप से याचिकाकर्ताओं से संबंधित मामले में प्रासंगिक है। गवाहों की विश्वसनीयता की जांच बहस सुनने के पश्चात की जानी है, एवं इस स्तर पर यह आशंका करना गवाह भोपालाराम और नंदाराम को अविश्वसनीय है उचित नहीं होगा। मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में मेरी सुविचारित राय है कि विचारण न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ताओं द्वारा दाखिल प्रार्थना पत्र अंतर्गत 311 द०प्र०स० को खारिज किया जाना एक गलती है। न्यायालय सीआरपीसी की धारा 311 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए भोपालाराम और नंदाराम को पुनः जिरह हेतु वापस बुलाना चाहिए था।"

4. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा कथन किया गया कि कि उच्च न्यायालय द्वारा को उक्त प्रार्थना को स्वीकार नहीं करनी चाहिए क्योंकि संहिता की धारा 311 को नियंत्रित करने वाले मापदण्ड वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होते थे। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने अपीलकर्ता के कथनों का समर्थन किया। प्रत्यर्थी संख्या 2 एवं 3 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा कथन किया कि अंततः न्याय करने के लिए सर्वोत्तम साक्ष्य को पत्रावली पर आना चाहिए अतः उच्च न्यायालय के आदेश में कोई कमी नहीं है।

5. सहिता की धारा 311 का संदर्भ लिया जा सकता है, जो इस प्रकार है:

"311. महत्वपूर्ण गवाह को बुलाने, या उपस्थित व्यक्ति की जांच करने की शक्ति।–

कोई भी न्यायालय, इस संहिता के तहत किसी भी जांच, मुकदमे या अन्य कार्यवाही के किसी भी चरण में, किसी भी व्यक्ति को गवाह के रूप में बुला सकता है या उपस्थिति में किसी भी व्यक्ति की जांच कर सकता है, भले ही उसे गवाह के रूप में नहीं बुलाया गया हो या किसी व्यक्ति को वापस बुला सकता है और उसका साक्ष्य सामने आने पर उसकी दोबारा जांच कर सकता है। मामले के उचित निर्णय के लिए यह आवश्यक है।"

6. यह धारा स्पष्ट रूप से दो भागों में है। जहाँ तक पहला भाग सम्बंधित है तो उक्त भाग में प्रयुक्त शब्द "सकता है" है, वहीं दूसरे भाग में "करेगा" शब्द का प्रयोग किया गया है। परिणामस्वरुप, पहला भाग फौजदारी न्यायालय को पूरी तरह से विवेकाधीन अधिकार देता है और उसे संहिता के तहत किसी भी जांच, परीक्षण या कार्यवाही के किसी भी चरण में (ए) किसी को गवाह के रूप में बुलाने के लिए, या (बी) उपस्थित किसी भी व्यक्ति को परीक्षित करने का, या (सी) किसी ऐसे व्यक्ति, जिसका साक्ष्य पहले ही दर्ज किया जा चुका है,को पुनः तलब करते हुए पुनः परीक्षित कराये जाने का अधिकार देता है । दूसरी ओर दूसरा भाग अनिवार्य है और यदि नए साक्ष्य मामले के उचित निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होते हैं तो न्यायालय को उपरोक्त कोई भी कदम उठाने के लिए बाध्य करता है। यह एक पूरक प्रावधान है, और कुछ परिस्थितियों में न्यायालय पर यह कर्तव्य अधिरोपित करता है ऐसे महत्वपूर्ण गवाह की परिक्षा

करायी जाए जिसे उसके समक्ष नहीं लाया गया है। यह प्रावधान यथासंभव व्यापक रूप में अंकित किये गए है, तथा इसमें किसी सीमा न तो स्तर के संबंध में, न ही उस तरीके के संबंध में जिसमें इसका न्यायालय द्वारा प्रयोग किया जाना चाहिए। यह न केवल विशेषाधिकार है, बल्कि न्यायालय का स्पष्ट कर्तव्य भी है कि वह उन गवाहों को परीक्षित कराये, जिन्हें वह राज्य एवं उसके विषय के बीच न्याय करने के लिए आवश्यक समझता है। सभी विधिक तरीकों से सत्यता तक पहुंचने के लिए न्यायालय का कर्तव्य है और ऐसे तरीकों में से एक है अपनी इच्छा से गवाहों को परीक्षित करना, जब कुछ सुस्पष्ट कारणों से कोई भी पक्षकार उन गवाहों को परिक्षण कराने के लिए तैयार नहीं है तथा जो महत्वपूर्ण प्रासंगिक तथ्य बोलने की स्थिति है।

7. संहिता की धारा 311 का अंतर्निहित उद्देश्य यह है कि मूल्यवान साक्ष्य को रिकॉर्ड पर लाने में किसी भी पक्ष की गलती या दोनों ओर से परीक्षित कराये गए गवाहों के बयानों में अस्पष्टता होने के कारण न्याय में विफलता न हो । निर्धारक कारक यह है कि क्या ऐसा साक्ष्य मामले के उचित निर्णय के लिए आवश्यक है। यह धारा केवल अभियुक्तों के लाभ तक ही सीमित नहीं है तथा इस धारा के अंतर्गत किसी गवाह को केवल इसलिए बुलाना क्योंकि उक्त गवाह केवल अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन करता है, न कि अभियुक्त का, न्यायालय की शक्तियों का अनुचित प्रयोग नहीं होगा।
   यह धारा एक सामान्य धारा है जो संहिता के तहत सभी कार्यवाहियों, पूछताछ और परीक्षणों पर लागू होती है और मजिस्ट्रेट को ऐसी कार्यवाही, परीक्षण या पूछताछ के किसी भी चरण में किसी भी गवाह को समन जारी करने का अधिकार देती है। धारा 311 में महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति है "इस संहिता के तहत जांच या परीक्षण या अन्य कार्यवाही के किसी भी चरण में"। हालाँकि, यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उक्त धारा गवाहों को बुलाने के लिए न्यायालय को बहुत व्यापक शक्ति प्रदान करती है, लेकिन प्रदत्त विवेक का उपयोग विवेकपूर्ण तरीके से किया जाना चाहिए, क्योंकि शक्ति जितनी व्यापक होगी न्यायिक दिमाग के प्रयोग की आवश्यकता उतनी ही अधिक होगी।

8. जैसा कि ऊपर बताया गया है, उक्त धारा पूर्णतः विवेकाधीन है। इसका दूसरा भाग मजिस्ट्रेट पर एक दायित्व डालता है: वह यह है कि न्यायालय उन सभी व्यक्तियों को बुलाएगा और उनकी परिक्षण करेगा जिनके साक्ष्य मामले के उचित निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होते हैं। साक्ष्य विधि में यह एक प्रमुख नियम है कि सर्वोत्तम उपलब्ध साक्ष्य न्यायालय के समक्ष लाया जाना चाहिए। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (संक्षेप में ' साक्ष्य अधिनियम') की धारा 60 , 64 और 91 , इसी नियम पर आधारित हैं। संहिता के प्रावधानों न्यायालय को यह अधिकार नहीं है कि वह अभियोजन या बचाव पक्ष को अपने पक्ष के किसी विशेष गवाह या गवाहों से पूछताछ करने के लिए बाध्य कर सके। इसे पक्षकारों पर छोड़ देना चाहिए। लेकिन साक्ष्यों का मूल्यांकन करते समय, न्यायालय इस तथ्य पर ध्यान दे सकता है कि सर्वोत्तम उपलब्ध साक्ष्य नहीं दिया गया है और प्रतिकूल निष्कर्ष निकाल सकता है। न्यायालय को प्राय: पक्षकारो द्वारा लगाए गए आरोपों या साक्ष्य में प्राप्त तथ्यों से अनिर्णायक निष्कर्ष पर निर्भर रहना होता है। ऐसे मामलों में न्यायालय को धारा के दूसरे भाग के अन्तर्गत कार्यवाही करनी चाहिये। कभी–कभी न्यायालय के निर्देशानुसार गवाहों का परिक्षण "खामियों को भरना" माना जा सकता है। यह पूरी तरह से एक सहायक कारक है और इसे पर ध्यान नहीं देना चाहिए। नया साक्ष्य आवश्यक है या नहीं, यह निश्चित रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर होना चाहिए, और इसका निर्धारण पीठासीन न्यायाधीश द्वारा किया जाना चाहिए।

9. धारा 311 का उद्देश्य न केवल अभियुक्त और अभियोजन पक्ष के दृष्टिकोण से बल्कि व्यवस्थित समाज के दृष्टिकोण से भी साक्ष्य को रिकॉर्ड पर लाना है। यदि न्यायालय द्वारा बुलाया गया कोई गवाह शिकायतकर्ता के विरुद्ध साक्ष्य देता है तो उसे जिरह का अवसर दिया जाना चाहिए। अदालत द्वारा बुलाए गए गवाह से जिरह करने का अधिकार धारा 311 के प्रावधान के तहत नहीं , बल्कि साक्ष्य अधिनियम के तहत आता है, जो एक पक्ष को ऐसे गवाह से जिरह करने का अधिकार देता है जो उसका अपना गवाह नहीं है। चूँकि न्यायालय द्वारा बुलाए गए गवाह को किसी विशेष पक्ष का गवाह नहीं कहा जा सकता, इसलिए न्यायालय को शिकायतकर्ता को जिरह का अधिकार देना चाहिए। इन पहलुओं को जगत रवि बनाम महाराष्ट्र राज्य (ए०आई०आर 1968 एस०सी 178), राम पासवान और अन्य बनाम झारखंड राज्य (2007 (11) एस०सी०सी 191), इद्दर और अन्य आबिदा और अन्य . (2007 (11) एससीसी 211) में उजागर किया गया था।

10. मिश्रलाल एवं अन्य बनाम एमपी राज्य और अन्य (2005 (10) एससीसी 701) में इस न्यायालय द्वारा, अन्य बातों के साथ–साथ इस प्रकार टिप्पणी की:

"5. अपीलकर्ताओं के विद्वान ने पी०डब्लू० 2 मोकम सिंह के साक्ष्य पर गंभीर आरोप लगाये है। इस गवाह को सत्र न्यायाधीश द्वारा दिनांक 6.2.1991 को परीक्षित एवं उसी दिन बचाव पक्ष के अधिवक्ता द्वारा जिरह की गई। इसके बाद, ऐसा लगता है, कि आरोपी व्यक्तियों की ओर से एक प्रार्थना पत्र दाखिल किया गया था और पीडब्लू–2 मोकम सिंह को वापस बुला लिया गया था। दिनांक 31.7.1991 को पी०डब्लू–2 की फिर से परीक्षा एवं प्रतिपरीक्षा की गई। यहाँ यह ध्यान देने वाली बात है कि कुछ व्यक्ति जो कथित तौर पर इस घटना में शामिल थे, नाबालिग थे तथा उनके मामले की सुनवाई किशोर न्यायालय द्वारा की गई थी। किशोर न्यायालय के समक्ष मामले में गवाह के रूप में पी०डब्लू० 2 मोकम सिंह से भी पूछताछ की गई थी। किशोर न्यायालय में, उसने इस आशय का साक्ष्य दिया कि वह उन व्यक्तियों के बारे में नहीं जानता था जिन्होंने उस पर हमला किया था और हमलावरों की आवाज सुनकर उसने मान लिया कि वे कुछ बंजारे थे। वापस बुलाने पर जब पी०डब्लू–2 "मोकम सिंह" को उन साक्ष्यों से अवगत कराया गया जो उसने बाद में किशोर न्यायालय के समक्ष दिए थे, जिनके आधार पर आरोपी व्यक्तियों को आईपीसी की धारा 307 के अंतर्गत लगाये गए आरोपो से दोषमुक्त किया गया।

6. हमारी राय में, सत्र न्यायाधीश द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया पूरी तरह से कानून के अनुरूप नहीं थी। एक बार जब गवाह की मुख्य परीक्षा एवं जिरह पूर्ण हो जाती है, तो ऐसे गवाह को उक्त उस साक्ष्य को अस्वीकार करने हेतु वापस नहीं बुलाया जाना चाहिए, जो उसने पहले ही न्यायालय के समक्ष दे दिया था, भले ही उस गवाह ने बाद में किसी अन्य न्यायालय या फोरम के समक्ष असंगत बयान दिया हो। किसी गवाह का प्रति परीक्षा केवल उसके द्वारा दिए गए पिछले बयनों से ही करायी जा सकती है। दिनांक 6.2.1991 को जब पी०डब्लू० 2 "मोकम सिंह" की परीक्षा हुई उस समय, ऐसा कोई पूर्व में बयान नहीं थे तथा बचाव पक्ष के अधिवक्ता ने पूर्व में दिए गए कथित किसी भी बयान से उसका प्रति परीक्षा नहीं किया। इस गवाह ने किशोर न्यायालय के समक्ष, विषयेतर कारणों से बयानों का कोई अन्य संस्करण दिया होगा तथा उसे शपथ के अन्तर्गत पूर्व में दिए गए साक्ष्य को पूरी तरह से मिटाने के लिए बाद के चरण में एक और अवसर नहीं दिया जाना चाहिए था। अदालतों को प्रक्रियाओं का सख्ती से पालन करना होगा और किसी गवाह को अदालत के समक्ष झूठी गवाही देने के लिए कानूनी कार्यवाही से बचने की अनुमति केवल यह कहकर नहीं दी जा सकती कि उसने यह गवाही पुलिस के दबाव में या किसी अन्य कारण से दी थी। जब भी कोई गवाह अदालत में झूठ बोलता है और यह संतोषजनक सिद्ध हो जाता है, तो न्यायालय को ऐसे गवाहों के विरुद्ध गंभीर कार्यवाही करनी चाहिए।"

11. मिश्री लाल के मामले (सु०प्रा) में तथ्यात्मक परिदृश्य वर्तमान मामले के तथ्यों के साथ काफी समानता है। उच्च न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 311 के संदर्भ में प्रार्थना स्वीकार करने के कोई विधिक अधिकार नहीं है। मामले के तथ्यों के अनुसार, उच्च न्यायालय को संहिता की धारा 311 के अंतर्गत में आरोपी व्यक्तियों द्वारा की गई प्रार्थना को स्वीकार नहीं करना चाहिए था। उपरोक्त स्थिति के अनुसार, हम उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश को रद्द करते हैं।

12. तदनुसार, अपील स्वीकार की जाती है।

अपील स्वीकार ।

Vetted by—
Arjit Verma, Civil Judge(J.D)/FTC/Crime Against Women, Budaun.

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।